पूज्य लालचंदभाई के प्रवचन
श्री प्रवचनसारजी गाथा ८०,
जैसेन आचार्य और अमृतचंद्र आचार्य की टीका
प्रवचन नंबर LA317

Version 1

श्री प्रवचनसारजी शास्त्र। उसकी जयसेन आचार्य भगवान की टीका। गाथा नंबर ८०। उसकी टीका।

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं॥८०॥

एक-एक का अर्थ करते हैं। **जो जाणदि अरहंतं** उसका अर्थ करते हैं। **य: कर्ता जानाति।** जो जानता है उसे कर्ता कहने में आता है।

कम्। अर्हन्तम्। कैः कृत्वा। दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं द्रव्यत्वगुणत्वपर्यायत्वैः। अरिहंत को द्रव्यपने, अरिहंत को गुणपने, अरिहंत को पर्यायपने, **सो जाणदि अप्पाणं।**

जो कोई जीव अरिहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानता है ऐसा जीव, **स पुरुषोऽर्हत्परिज्ञानात्पशचादात्मनं जानाति** जो कोई भव्य आत्मा- लायक जीव, पहले अरहंत के द्रव्य को, अरहंत के गुणों को और अरहंत की पर्याय को जानता है कि अरिहंत का द्रव्य परिपूर्ण है, नित्य निरावरण है, अबद्ध है; इसप्रकार उनके द्रव्यस्वभाव को परिपूर्ण जो है, ऐसा जानता है और उनके गुण ज्ञानादि वे भी परिपूर्ण हैं पारिणामिक भाव से, ऐसा जानता है और उनकी पर्याय परिपूर्ण केवलज्ञान, केवलदर्शन जिनको प्रगट हो गया है। ऐसी परिपूर्ण पर्याय जिसमें जानना-जानना-जानना-जानना धारावाही है, इसप्रकार अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानकर पश्चात् मैं भी उनके जैसा ही हूँ।

(सो) जाणदि अप्पाणं। मैं भी उन अरहंत के द्रव्यपने- जैसा उनका द्रव्य है ऐसा मेरा द्रव्य है। उनके (जितने) गुण हैं उतने ही मेरे गुण हैं और उनकी पर्याय में जैसे जानना-जानना, चेतना प्रगट होती है, ऐसे मेरी पर्याय में भी चेतना है। इसप्रकार द्रव्य, गुण, पर्याय को चेतनरूप जानता है। अरिहंत के द्रव्य में, गुण में या पर्याय में कहीं भी राग-द्वेष नहीं है। तो मेरे परिणाम में भी वास्तव में राग-द्वेष नहीं है। राग-द्वेष चेतन के परिणाम नहीं हैं। अगर वे राग-द्वेष अरिहंत की पर्याय में हों तो ही मेरी पर्याय में होंगे।

मैं तो उनके.., उनकी पर्याय के साथ मैं अपनी पर्याय का मिलान करता हूँ। तो उनकी पर्याय में राग नहीं है- ऐसा जानकर जब मैं अपनी पर्याय को जानता हूँ, तो मेरी पर्याय में ज्ञान-उपयोग दिखता है। मेरी पर्याय में राग-द्वेष दिखता नहीं है। क्योंकि अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानकर मैं भी उनके जैसा ही हूँ- ऐसे मिलान करता है। और जब मिलान हो जाता है तब मोह का नाश हो जाता है।

मुमुक्षु:- वाह, बहुत सुन्दर। मिलान करता है।

उत्तरः- मिलान करता है और मिलान हो जाता है। द्रव्य से मिलानपना है। वे चेतन हैं, मैं भी चेतन। उनमें चैतन्य गुण, मेरे में भी चैतन्य गुण। उनमें भी चिद्विवर्तन-चेतना। चेतना मतलब ज्ञान उपयोग। ऐसे ही मेरे में भी ज्ञान उपयोग होता है प्रति समय।

इसप्रकार अरहंत के द्रव्य, गुण और पर्याय को जानकर अपने आत्मा का मिलान करता है, तो द्रव्य, गुण और पर्याय से मिल जाता है आत्मा। अभी वर्तमान में। उनके जैसा ही मैं हूँ- जब ऐसा जानता है, तब मोह क्षय होता है। उनकी पर्याय में राग नहीं है, और यहाँ पर्याय में राग स्थापित करे, तो मोह क्षय नहीं होगा। तो तो अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानकर **पश्चात्** , मैं भी उनके जैसा ही हूँ- ऐसा जानना चाहिए न? उनसे अलग नहीं पड़ना चाहिए।

मुमुक्षुः- उनसे अलग पड़े....

उत्तरः- तो मोह क्षय नहीं होगा। ऐसा। ये तो मोह क्षय- दर्शनमोह के नाश का उपाय बताते हैं।

स पुरुषो अर्थात् आत्मा, **ऽर्हत्परिज्ञानात्** अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को परिपूर्णपने जानकर। **पश्चात्** फिर अपने आत्मा को जो जानता है, आहाहा! **तत् पश्चात् आत्मानं जानाति** अपने आत्मा को जानता है कि मैं भी उनके जैसा हूँ। अब, अरिहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानकर अपने आत्मा को भी जब उनके जैसा जाना, तो उसके फल में क्या आया? कि **मोहो खलु जादि तस्स लयं** आहाहा! उनको जानकर जब अपने आत्मा को ऐसा ही जानता है, किंचित् मात्र अंतर नहीं है। जैसे अरहंत जाननहार हैं, ऐसे मैं भी जाननहार हूँ। जैसे सिद्ध जाननहार ऐसे मैं भी जाननहार हूँ। मिलान हो गया। पर्याय से मिलान हो गया।

मुमुक्षुः- क्योंकि मिलान का काम तो पर्याय में होता है न?

उत्तरः- पर्याय में होता है न? द्रव्य, गुण तो एकसमान हैं। उसमें तो कोई वादविवाद है ही नहीं। और भूल भी पर्याय में हुई है न? पर्याय में ज्ञान उपयोग होने पर भी पर्याय में राग होता है (ऐसा मानता है), वह मोह का कारण हुआ। अब, पर्याय में राग नहीं होता, पर्याय में ज्ञान होता है (ऐसा माने) तो मोह की उत्पत्ति नहीं होगी।

मुमुक्षुः- मतलब जैसा स्वरूप है वैसा दिखा उसे।

उत्तरः- बस! जैसा स्वरूप है, एक यह अपने स्वरूप का नमूना दिया।

मुमुक्षुः- वे प्रतिबिंब हैं।

उत्तरः- प्रतिबिम्ब हैं। उनको जानकर मैं उनके जैसा हूँ, ऐसा जान। क्योंकि सीधा अपने आत्मा को नहीं जान सकता था। अज्ञानी प्राणी अपने आत्मा को सीधा नहीं जान सकता था। जिसप्रकार सोने का परीक्षक, अपरिक्षक को सिखाता है, तब कसौटी पर सौ टंच का सोना उसे दिखाता है पहले, कि देख, यह नमूना। इसके साथ मेल खाए वो सोना। इसके साथ ना मिले वो सोना नहीं है, मैला है। धोखा मत खाना, ध्यान रखना। नमूना देता है, कसौटी पर। और ऐसे देखता जाता है, ऐसे देखता जाता है उसके साथ नहीं मिलता तो कहता है, "नहीं, ये तो बारह वान है, दस वान है, इसमें मिलावट है"। धोखा नहीं खाता।

इसीप्रकार, अनादिकाल का अज्ञानी जीव अपने स्वरूप को नहीं जानता। अब अपने स्वरूप

को नहीं जानता..; किन्तु अपना स्वरूप भले नहीं जानता, पर मेरे से पूर्व अपने स्वरूप को जानकर परिपूर्ण परमात्मा हुए हैं अरिहंत, उनका स्वरूप तो मैं जानूँ। फिर अपना स्वरूप जानूँ। तो अरहंत के द्रव्य, गुण और पर्याय को जानता है प्रथम। देखो! जैनमत अनुयायी मिथ्यादृष्टि का मोह क्षय होता है, ऐसा कहते हैं। जिसे अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय में भूल है, (और) वह उनके जैसा अपने को मानता है, (उसका) मोह क्षय नहीं होगा। अरिहंत को भूख लगती है और रोग होता है, (मुमुक्षुः- उसकी तो बात ही नहीं है।) मतलब उसे उन अरिहंत के स्वरूप के बारे में विपरीतता हुई।

यह तो दिगम्बर जैन आचार्य भगवंतों ने जो अरिहंत का स्वरूप लिखा, ऐसे ही अरहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानता है। चेतन, चैतन्य और चिद्विवर्तन। चेतन द्रव्य, चैतन्य गुण और चेतना पर्याय। तो वहाँ भी चेतना है और यहाँ भी चेतना ही है, आहाहा! वहाँ राग नहीं है ऐसे यहाँ भी राग नहीं है, आहाहा! छद्मस्थ का आत्मा अरिहंत के साथ मिल जाता है, बोलो! अरिहंत होने से पहले अरिहंत के साथ समानपना आ जाता है।

मुमुक्षुः- इसीलिए ही अरहंत हो जाता है न?

उत्तरः- इसीलिए ही अरिहंत हो जाता है। सम्यग्दर्शन होता है। मोह क्षय हो गया। आहाहा! बहुत ऊँची गाथा है। नमूना दिखाते हैं। तुम किसके जैसे हो? उसने नहीं कहा? एकबार दृष्टान्त दिया था मैंने। कि सिंह का बच्चा रास्ता भूलकर घेटे-मेंढे में, भेड़-भेड़ में चला गया। भेड़ कहते हो ना? उनमें चला गया। छोटा था इसलिए पता नहीं था, अतः उनके साथ (रहने लगा)। वह ग्वाला भी उसे चराने लगा। थोड़ा-थोड़ा बड़ा होने लगा। बड़ा होने लगा, तब एक दिन उस टीले पर एक सिंह आया। अरे! ये मेरी जाति का बच्चा इनमें कहाँ फस गया?

मुमुक्षुः- भाई! कैसा है? हें! आहाहा! भ्रम में वह उनके साथ (मिल गया)? भेड़ के साथ (भेड़ जैसा) हो गया?

उत्तरः- मैं भेड़ हो गया। भेड़ ही हूँ। अपने स्वरूप को भूल गया। मैं सिंह हूँ। मैं शेर हूँ- ये भूल गया ना? हें, अच्छा! अपने आप से मालूम नहीं हुआ। शास्त्र में आता है कि या तो स्वयं से या पर के उपदेश से। आता है न? खुद को अपने स्वरूप का पता नहीं चला अपने आप से। उसी बीच टीले के ऊपर से दूर से सिंह ने देखा इन भेड़ को, भेड़ों की टोली को और उसमें मेरी जाति का सिंह! आहाहा!

मुमुक्षुः- सबसे भिन्न पड़ता दिखा उसे।

उत्तरः- आहाहा! भिन्न पड़ता दिखा। लक्षण से उसे अलग कर दिया ना? भेड़ कहाँ और सिंह कहाँ? उसका तेज छिप सकता है कोई? अब इसे किस प्रकार छुड़ाना? छुड़ाना है बच्चे को। फस गया है। पहले यहाँ से आवाज की। दहाड़ मारी। वहाँ मूल तो जाति तो सिंह की थी न? हें, रोएँ बैठ गये, कि यह क्या? सिंह के बच्चे को उसकी भाषा में कहता है, (कि) पहले मेरी ओर देख! उसके बाद ही अपनी ओर देख। उस सिंह के बच्चे ने ऐसे (सिंह को) देखा, ऐसे देखकर ऐसे (स्वयं को) देखा। ऐसे जहाँ देखा वहाँ तो 'मैं सिंह हूँ' (ऐसी प्रतीति हो गई।) कूदकर बाहर निकल गया।

इसीप्रकार इस संसार में से बाहर निकलता है, जब अरिहंत को देखकर अपने स्वरूप को देखता है। आहाहा! अरिहंत कहते हैं कि तू मेरे सामने देख। अरिहंत की वाणी में आया, दिव्यध्वनि में।

तू पहले मेरे सामने देख और फिर अपने सामने देख। मैं द्रव्य, गुण, पर्याय से शुद्ध हूँ। तुम भी द्रव्य, गुण, पर्याय से ऐसे ही हो, ज्ञानमय आत्मा हो। आहाहा!

तेरे द्रव्य, गुण, पर्याय में और मेरे द्रव्य, गुण, पर्याय में किंचित् मात्र फर्क नहीं है। जो प्रगट उपयोग लक्षण है, चेतना। चेतना प्रगट है। यहाँ भी चेतना है और वहाँ भी चेतना है। चेतन और चैतन्य तो एकसमान हैं।

मुमुक्षुः- पर शेर और शेर का बच्चा एक सा ही होता है न!

उत्तरः- एक सा ही होता है।

मुमुक्षुः- उसमें क्या फर्क होता है?

उत्तरः- कोई फर्क नहीं होता। इसलिए पहले वहाँ देखना। वहाँ देखकर, अरे! ऐसे जहाँ देखा वहाँ उसमें सिंह का वीर्य प्रगट हो गया। शक्ति तो थी। सिंह तो था ही। लेकिन उन भेड़ों को देखकर (सिंह)वृत्ति दब गई थी। तिरोभूत हो गई थी वृत्ति। और ऐसे (सिंह को) जहाँ देखा और ऐसे (स्वयं को) देखा अरे! छलांग मारी हों! छलांग मारकर निकल गया बाहर।

मुमुक्षुः- उसके पास पहुँच गया।

उत्तरः- उसके पास पहुँच गया। सिंह के पास, हों! उसके पास ही पहुंचे न वह तो। उसने बुलाया इसलिए, हें? उसने बुलाया इसलिए उसके पास जाना चाहिए। सिद्ध भगवान हमें बुलाते हैं। आओ आओ यह पद तुम्हारा है, यह पद तुम्हारा है। आहाहा!

मुमुक्षुः- सिंह तो था लेकिन सिंह का ख्याल आ गया।

उत्तरः- हाँ। सिंह तो था ही। पर अपने आप से ख्याल नहीं आता था। तो दूसरे के उपदेश से ख्याल आ गया। फिर उसके पास चला गया।

मुमुक्षुः- उसके पास ही जाये न। भेड़ के पास रहे कोई?

उत्तरः- भेड़ के पास रहे कोई? आहाहा! वह तो बंधन में था, अब मुक्त हो गया। वह बंधन में था। टोली में था न? उनके साथ आना-जाना, उसका ग्वाला जैसा चाहे ऐसा करना पड़े, हें! अब तो मुक्त हो गया! खलास! ऐसे ही यह ८० नंबर की गाथा बहुत ऊँची है। इस दृष्टान्त से बराबर ख्याल आ सकता है। वह दृष्टान्त है। उसमें सिद्धांत कहते हैं कि पहले अरिहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जान। आहाहा! और जानकर फिर.., वहाँ जानकर वहाँ लक्ष्य में रुकना नहीं है। उन्हें जानते नहीं रहना है। उन्हें जानकर फिर यहाँ (अपने को) जान। आहाहा!

स पुरुषोऽर्हत्परिज्ञानात्पश्चादात्मनं जानाति, हें? अरिहंत के द्रव्य, गुण, पर्याय को जानकर फिर अपने आत्मा को जानता है। अब उसने अपने आत्मा को जाना तो फल क्या आया? कि **मोहो खलु जादि तस्स लयं।** आहाहा! **तत आत्मपरिज्ञानात्तस्य मोहो** अर्थात् **दर्शनमोहो लयं विनाशं क्षयं यातिती। विनाशं क्षयं यातीति।** आहाहा! कहते हैं, संस्कृत अपनी....चलती है गाड़ी!

तत आत्मपरिज्ञानात्तस्य,आत्मा के...। आत्मा का भान हुआ, आत्मा का ज्ञान हुआ, तो आत्मा का ज्ञान हुआ तो क्या हुआ? **मोहो दर्शनमोहो लयं विनाशं।** दर्शनमोह- भाव दर्शनमोह और द्रव्य दर्शनमोह, दोनों का नाश हो गया, खलास! क्षय हो गया। **विनाशं क्षयं यातीति।** आहाहा! उपशम

नहीं। उपशम शब्द नहीं है। क्षयोपशम नहीं है।

मुमुक्षुः- अब उसमें उपशम का क्या काम है?

उत्तरः- अब क्या काम है उपशम का?

मुमुक्षुः- छलाँग मारकर भाग जाय फिर उसमें (वापस) आये?

उत्तरः- छलाँग मारकर, भाग गया। (वापस) आये ही नहीं। आहाहा! उस जीव का मोह अर्थात् भावमोह, दर्शनमोह, मिथ्यात्व, अज्ञान नाश को प्राप्त हो जाता है।

अब, द्रव्य, गुण और पर्याय कैसे होते हैं उसका ज्ञान कराते हैं। पूर्वोक्त तो संक्षेप में, संक्षेप में अन्वयार्थ के रूप में ले लिया। हं, मूल में इतना है।

यो जानात्यर्हन्तं द्रव्यत्वगुणत्वपर्ययत्वैः ।
स जानात्यात्मानं मोहः खलु याति तस्य लयम् ॥ ८० ॥

वह जो ८० गाथा का है न? उतने का अर्थ हुआ। अब टीका। गाथा का अर्थ हुआ। अब टीका करते हैं स्वयं।

मुमुक्षुः- गाथा के अर्थ में ही भाई! कितना सुन्दर स्पष्ट करते हैं!

उत्तरः- गाथा के अर्थ में ही सब आ गया। गाथा के अर्थ में ही आ गया सब। अब उसका विस्तार करते हैं। द्रव्य किसे कहते हैं? गुण किसे कहते हैं? और पर्याय किसे कहते हैं? ऐसे उसके तीन भाग करते हैं उसके लक्षण। द्रव्य का लक्षण, गुण का लक्षण और पर्याय का लक्षण। इसप्रकार तीन लक्षण से भिन्न करते हैं।

केवलज्ञानादयो विशेषगुणा, केवलज्ञान है वह आत्मा का विशेष, असाधारण गुण है। **अस्तित्वादयः सामान्यगुणाः** अस्तित्व आदि सामान्य गुण हैं। ज्ञान है वह असाधारण गुण है। **विशेषगुणा** अर्थात् असाधारण गुण है। ज्ञान गुण आत्मा का। और अस्तित्व आदि वगैरह अस्तित्व, वस्तुत्व आदि, वे सामान्य गुण हैं। ऐसा कहते हैं कि विशेष ज्ञान गुण है, वह जीव में ही होता है, अन्य में नहीं होता। उसे विशेष असाधारण गुण कहते हैं। और अस्तित्व, वस्तुत्व आदि जो गुण हैं वे सामान्य गुण हैं। जीव में भी हैं और अन्य पाँच द्रव्यों में भी हैं। अतः सामान्य गुण कहलाते हैं।

आगे, **परमौदारिकशरीराकारेण यदात्मप्रदेशानामवस्थानं स व्यंजनपर्यायः** परम औदारिक शरीर के कारण **यदात्मप्रदेशानाम** जो प्रदेश का कंपन, प्रदेश का आकार **स्थानं स व्यंजनपर्यायः** उसे व्यंजनपर्याय कहने में आता है। उसका अर्थ बराबर करो, देखो ये सही है? मैंने तो यूं ही किया ऊपर से।

मुमुक्षुः- **परमौदारिकशरीराकारेण**, परम औदारिक शरीर के आकार

उत्तरः- आकार वह जीव का आकार

मुमुक्षुः- आकार प्रमाण **यदात्मप्रदेशानामवस्थानं स व्यंजनपर्यायः** व्यंजनपर्याय की व्याख्या की।

उत्तरः- व्यंजनपर्याय की व्याख्या (यह है) कि जैसा शरीर परम औदारिक सिद्ध है उस ही प्रकार की उसकी आकृति अभी है। तो उसे व्यंजनपर्याय कहा जाता है। ये पर्याय का कहा। एक

सामान्य, एक विशेष गुण कहा ज्ञान, साधारण गुण अस्तित्व कहा और व्यंजनपर्याय। पर्याय में व्यंजनपर्याय ली। जिसमें परम औदारिक शरीर निमित्त है। निमित्त के रूप में और नैमित्तिक के रूप में उसकी व्यंजनपर्याय, प्रदेशत्व गुण के आकार ....

मुमुक्षु:- उस प्रमाण में हीआत्मा का आकार है।

उत्तर:- उस ही प्रमाण में आत्मा का आकार है, ऐसा! **स व्यंजनपर्याय:** अब आगे, **अगुरुलघुकगुणषड्वृद्धिहानिरूपेण प्रतिक्षणं प्रवर्तमाना अर्थपर्याया:** व्यंजनपर्याय के पश्चात् अब अर्थपर्याय लेते हैं।

मुमुक्षु:- अर्थपर्याय में अगुरुलघुगुण की पर्याय लेते हैं।

उत्तर:- ली है क्योंकि वह निर्मल और शुद्ध है, आहाहा!

मुमुक्षु:- और एकसमान है सबकी।

उत्तर:- एकसमान है अरिहंत की और इस जीव की, दोनों की। वास्तव में तो अर्थपर्याय का ही काम है न? व्यंजनपर्याय तो ठीक है। मतलब व्यंजनपर्याय जैसे उनके है, ऐसे यहाँ व्यंजनपर्याय तो है ही न? उनके (अरिहंत के) परम औदारिक शरीर है, ये औदारिक शरीर है। तो व्यंजनपर्याय तो है, बस इतना। आकार बताया। क्षेत्र बताया। मूल तो क्षेत्र बताया।

अगुरुलघुगुण की जो हानि-वृद्धि पर्याय है **प्रतिक्षणं प्रवर्तमाना अर्थपर्याया:**, जैसे अरिहंत की अगुरुलघुगुण की पर्याय है वैसे यहाँ अगुरुलघुगुण की पर्याय, निर्मल और शुद्ध है। **एवंलक्षण** , **एवंलक्षण** गुण का लक्षण कहा और पर्याय का लक्षण कहा। गुण में सामान्य और असाधारण और साधारण गुण- दो कहे। और पर्याय में व्यंजनपर्याय और अर्थपर्याय। हें? गुण के दो प्रकार और पर्याय के भी दो प्रकार कहे। अब टोटल करते हैं। **एवं**, एवं मतलब?

मुमुक्षु:- एवं (अर्थात्) आगे।

उत्तर:- **एवंलक्षणगुणपर्यायाधारभूतममूर्तमसंख्यातप्रदेशं शुद्धचैतनयान्वयरूपं द्रव्यं चेति।** अब, द्रव्य की व्याख्या करते हैं कि द्रव्य किसे कहते हैं? कि गुण-पर्याय को आधारभूत असंख्य प्रदेश शुद्ध चैतन्यस्वरूप, वह द्रव्य(है)। **द्रव्यं चेति।** द्रव्य है ऐसा जान। चेति मतलब जान।

मुमुक्षु:- उसमें अन्वयरूप द्रव्य है।

उत्तर:- ऐसा? यह अन्वयरूप द्रव्य है। **शुद्धचैतन्यान्वयरूपंद्रव्यं** ऐसा अन्वयरूप, वही का वही, वही का वही, वही का वही, ऐसा है वह द्रव्य है। बराबर! **गुणपर्ययवत् द्रवयम्** (तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय ५, सूत्र ३८) संक्षेप में। **गुणपर्ययवत् द्रवयम्** लिया पूरा। प्रमाण का विषय।

इत्थंभूतं द्रव्यगुणपर्यायस्वरूपं पूर्वमर्हदभिधाने परमात्मनि ज्ञात्वा पश्चान्निश्चयनयेन तदेवागमसारपदभूतयाऽध्यात्मभाषया निजशुद्धात्मभावनाभिमुखरूपेण सविकल्पस्वसंवेदनज्ञानेन जरा पढ़ लूँ। **तथैवागमभाषयाध:प्रवृत्तिकरणापूर्वकरणानिवृतिकरण संज्ञदर्शनमोहक्षपणसमर्थपरिणामविशेषबलेन पश्चादात्मनि योजयति। तदनन्तरमविकल्पस्वरूपे प्राप्ते यथा पर्यायस्थानीयमुक्ताफलानि गुणस्थानीयं धवलत्वं चाभेदनयेन हार एव तथापूर्वोक्तद्रव्यगुणपर्याया अभेदनयेनातमैवेतिभावयतोदर्शनमोहान्धकार: प्रलीयते।** आहाहा!

करो, इसका अर्थ करो।

मुमुक्षुः- **एवंलक्षणगुणपर्यायाधारभूतममुर्तम्संख्यातप्रदेशं शुद्धचैतन्यान्वयरूपं द्रव्यं चेति। ईत्थंभूतं द्रव्यगुणपर्यायस्वरूपं पूर्वमर्हदभिधाने परमात्मनि ज्ञात्वा** ऐसा कहते हैं कि गुण और पर्यायों का आधारभूत अमूर्तिक, असंख्यात प्रदेशी, शुद्ध चैतन्य अन्वयरूप जो द्रव्य है, उसको इस प्रकार से द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप उन अरिहंत भगवान परमात्मा को जानकर मतलब उनको द्रव्य-गुण-पर्याय से इस प्रकार जानकर...

उत्तरः- जानकर, इस प्रकार जानकर।

मुमुक्षुः- जानकर। देखो, इसमें भी कैसा लिया! अरहंत भगवान की भी इस प्रकार अभेद जानकर!

उत्तरः- अभेद जानकर।

मुमुक्षुः- अभेद जानकर- द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप जानकर। द्रव्य को, गुण को, पर्याय को ऐसे अलग अलग नहीं जानना अरहंत में भी।

उत्तरः- अब सही (है)! क्योंकि यहाँ अभेद जानना है।

मुमुक्षुः- हाँ।

उत्तरः- ये अब सही है।

मुमुक्षुः- देखो, **इत्थंभूतं** इस प्रकार **द्रव्यगुणपर्यायस्वरूपं** द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप पहले अरहंत भगवान परमात्मा को जानकर।

उत्तरः- जान! अभेदरूप से, द्रव्य, गुण, पर्यायरूप से।

मुमुक्षुः- उनको भी अभेद जानना।

उत्तरः- वहाँ अभेद जान, ऐसे यहाँ अभेद जान।

मुमुक्षुः- पहले उनको भेद से जाना, द्रव्य, गुण, पर्याय। पश्चात् उन्हें अभेद से जान लिया।

उत्तरः- जान लिया, अच्छा।

मुमुक्षुः- पश्चात् यहाँ जान। अब यहाँ शुद्धनय से आत्मा को जानता है।

उत्तरः- उन्हें अभेदपने जान लिया, उसके बाद क्या शब्द है?

मुमुक्षुः- उसके बाद कहते हैं कि **पश्चात्**। उसके बाद।

उत्तरः- **पश्चात्**।

मुमुक्षुः- उनको जान लिया।

उत्तरः- जान लिया।

मुमुक्षुः- अब यहाँ। उसका मुख पलट गया।

उत्तरः- हाँ, मुख पलट गया।

मुमुक्षुः- उनको जानकर।

उत्तरः- हाँ, उपादान की तरफ आ गया।

मुमुक्षुः- अब यहाँ आ गया। कि **निश्चयनयेन** निश्चयनय से

तदेवागमसारपदभूतयाऽध्यात्मभाषया। निश्चयनय से आगम की जो सारभूत सारपदभूत जो अध्यात्म भाषा है उसके अनुसार **निजशुद्धात्मभावनाभिमुखरूपेण** निज शुद्धात्मा की भावना के सन्मुख हुआ।

उत्तरः- देखा? त्रिकाली द्रव्य, त्रिकाली द्रव्य के सन्मुख हुआ।

मुमुक्षुः- **सविकल्पस्वसंवेदनज्ञानेन** सविकल्प स्वसंवेदन ज्ञान कि जिसको आगम भाषा में अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण संज्ञा कहते हैं कि जो दर्शनमोह के क्षपण में समर्थ परिणाम विशेष के बल से **पश्चादात्मनि योजयति** उसके बाद वह आत्मा में परिणाम को जोड़ देता है।

उत्तरः- जोड़ देता है। **योजयति** जोड़ देता है।

मुमुक्षुः- पहले सन्मुख होता है, पीछे (पश्चात्) आत्मा में जोड़ देता है।

उत्तरः- जोड़ देता है। पूरा हो गया?

मुमुक्षुः- नहीं, अभी है। **तदनन्तर** उसके बाद **अविकल्पस्वरूपे प्राप्ते**।

उत्तरः- देखो, यहाँ तक सविकल्प था।

मुमुक्षुः- यहाँ तक सविकल्प।

उत्तरः- जब तक, संध्या! अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के परिणाम हैं, तब तक वह आत्मा के सन्मुख तो था। किन्तु बाद में आत्मा में जोड़ देता है पर्याय को। वो बाद में। जुड़ा नहीं है अभी। तब तक सविकल्प दशा थी, ऐसा।

मुमुक्षुः- भावना भाता है।

उत्तरः- भावना है। त्रिकाली द्रव्य की भावना भाता है, अर्थात् वह भावना है वह मोह क्षपण होने में समर्थ है, किन्तु मोह अभी क्षय नहीं होता है। वो है। बराबर है। मुमुक्षुः- उसके बाद तो परिणाम को आत्मा में..

उत्तरः- देखो! ध्येय के ध्यान में गया लेकिन ध्याता नहीं हुआ अभी।

मुमुक्षुः- हाँ, नहीं हुआ।

उत्तरः- ध्येय हाथ में आया पर ध्याता नहीं हुआ। ज्ञेय हाथ में आया पर ज्ञाता नहीं हुआ। ध्येय पूर्वक ज्ञेय होता है। वो होता है तब होता है, बराबर है। सविकल्प में तो वह शुद्धात्मा के सन्मुख हो गया और उसकी भावना में स्थित है। अतः उत्तरोत्तर क्षण में कर्ता-कर्म-क्रिया के भेद विलय होते जाते हैं। विलय हुए नहीं हैं। प्रोसेस (process) में आ गया। अभी मोह क्षय होगा, वह तो निश्चित है। क्योंकि अधःकरण आदि परिणाम में जो आया, वो तो वापस मुड़ता ही नहीं।

पर तब तक अभी सविकल्प कहा उसे। भले अबुद्धिपूर्वक है, पर है। निर्विकल्प नहीं है ध्यान। यहाँ तक मिथ्यात्व है, हों! सूक्ष्म परिणाम है, अथवा केवलीगम्य! किन्तु मिथ्यात्व का रस है अभी। टूटा नहीं है।

मुमुक्षुः- अभी तो ध्येय का विचार चलता है। ध्येय का पक्ष है अभी तक।

उत्तरः- ध्येय का पक्ष है।

मुमुक्षुः- ध्येय पूर्वक जब पूरा ज्ञेय होता है, तब मोह का क्षय होता है।

उत्तरः- आहाहा! गजब की गाथा है, हों! गजब की गाथा है। जो यहाँ आया, आया था वही इसमें है। अक्षरः अक्षर। उसमें मुझे कोई फर्क नहीं लगता। कोई फर्क नहीं लगता। जो ये लिखते हैं, ऐसा ही घटित हुआ था। ऐसा ही। अतः हूबहू है यह। अनुभव के काल में, अनुभव के सन्मुख होता है तब, अनुभव की प्रोसेस में प्रवेश हुआ तब और वृद्धिगत होता है तब क्या हुआ अंत में- वो सब लिखा है इसमें। इसमें सब आना पैसा सिक्का (बारीक से बारीक) लिखा है। कुछ बाकी नहीं रखा है। आहाहा!

मुमुक्षुः- जैसे आपको सब ऐसे सूक्ष्म में सूक्ष्म....

उत्तरः- ऐसे क्लियर है। हाँ, सूक्ष्म में सूक्ष्म..

मुमुक्षुः- ऐसे इसमें भी सब सूक्ष्म-सूक्ष्म है।

उत्तरः- सूक्ष्म है।

मुमुक्षुः- एक-एक।

उत्तरः- आत्म अभिमुख परिणाम जो शब्द लिखे हैं, (उसका अर्थ है कि) त्रिकाली द्रव्य के सन्मुख हो गया उपयोग। अभेद नहीं हुआ। पश्चात् आत्मा में जोड़ता है, ऐसा कहते हैं। पश्चात् आत्मा में जोड़ देता है उपयोग को। समझ गये? जोड़ता है। **पश्चात्** आत्मा में उपयोग को जोड़ता है। जब जोड़ता है तब अभेद होकर अनुभव होता है, ऐसा। वो पहले लिख दिया। कि इस प्रोसेस के बाद क्या करेगा वो आत्मा? कि उपयोग को आत्मा में जोड़ देगा। आहाहा! जोड़ने की शुरआत तो हो गई है किन्तु पूर्ण नहीं हुआ अभी, हों! करणलब्धि के परिणाम में अभी सम्यग्दर्शन प्रगट नहीं होता। निर्जरा शुरू हो गई। असंख्यात गुणी निर्जरा शुरू हो गई। (मुमुक्षुः- गुणश्रेणि निर्जरा।) भावनिर्जरा और द्रव्यनिर्जरा का ढेर होने लगता है। आहाहा! रजकण खिरने लगते हैं। अपने आप। आहाहा!

मुमुक्षुः- लेकिन संवर नहीं हुआ अभी।

उत्तरः- संवर नहीं हुआ। बहुत लोग मुझे ये प्रश्न करते हैं। कि करणलब्धि के परिणाम में आया अतः संवर तो हो गया? कि नहीं। संवर नहीं हुआ अभी बिलकुल। तो (कहते हैं) कि निर्जरा लिखी है। असंख्यात गुणी निर्जरा लिखी है गोम्मटसार में, तो संवरपूर्वक निर्जरा होती है न? मैंने कहा, नहीं। वो निर्जरा सापेक्ष है। संवरपूर्वक की नहीं है। समझ में आया? ऐसे प्रश्न आते हैं मेरे पास। और उसका बराबर उत्तर देता हूँ। हें! हाँ। संवरपूर्वक निर्जरा नहीं है। वो तो निमित्त में क्या होता है उसका ज्ञान कराया। निर्जरा होने लगी। परिणाम अभिमुख हुए तो द्रव्यनिर्जरा होने लगी और भावनिर्जरा भी होने लगी। किन्तु भाव निर्जरा पूरी नहीं होती। वो संवरपूर्वक ही होती है। ऐसा प्रश्न आया था।

मुमुक्षुः- संवर के साथ की निर्जरा नहीं है?

उत्तरः- नहीं। (तो) संवर बिना की निर्जरा (है)? कि नहीं। वह संवर सापेक्ष निर्जरा (है)। संवर पूर्वक निर्जरा तो अनुभव के काल में, निर्विकल्प ध्यान में होती है। चलो, फिर? ये सब इसमें (वीडियो रिकॉर्डर में) आ जाता है। इसमें हूबहू है। इसमें लिखा है ऐसा हमें स्वरूप भासित हुआ था। बोलो, मानो ये हमारे लिए लिखा हो! चलो, आगे क्या (कहते हैं)? आहाहा! देखो अब, अब **अविकल्प** निर्विकल्प ध्यान में आता है।

मुमुक्षुः- पहले तो दर्शनमोह के क्षपण में समर्थ परिणाम विशेष के बल से बाद में **पश्चादात्मनि**

योजयति। उस ही परिणाम को आत्मा में लगा देता है।

उत्तरः- लगा देता है, बस! क्षपण में समर्थ हो गया। अभी मोह का क्षय होगा। आहाहा! ऐसी स्थिति आ गई। हूबहू- हूबहू प्रोसेस लिख दी है मुनिराज ने। जैसा स्वयं को अनुभव से भासित हुआ, वैसा लिखा है। ऐसी प्रोसेस कहीं नहीं है।

मुमुक्षुः- कितनी व्यवस्थित!

उत्तरः- व्यवस्थित। आगे?

मुमुक्षुः- **पश्चादात्मनि योजयति।** आत्मा में लगाता है।

उत्तरः- लगाता है। अब आगे।

मुमुक्षुः- **तदनन्तर**

उत्तरः- **तदनन्तर**

मुमुक्षुः- उसके बाद, उत्तरोत्तर।

उत्तरः- उत्तरोत्तर, हाँ।

मुमुक्षुः- **अविकल्पस्वरूपे प्राप्ते।**

उत्तरः- **तदनन्तर** अर्थात् उत्तरोत्तर।

मुमुक्षुः- उसके बाद

उत्तरः- उसके बाद! ठीक। उसमें कर्ता-कर्म-क्रिया का आता है न? उत्तरोत्तर भेद क्षय होता जाता है, कर्ता-कर्म-क्रिया का भेद क्षय होता जाता है। इसमें ही है। नीचे आएगा। पढ़ना।

मुमुक्षुः- अमृतचंद्र आचार्य (ने लिया है)।

उत्तरः- हं! चलो फिर आगे।

करता करम क्रिया भेद नहीं भासतु है,
अकर्तृत्व सकति अखंड रीति धरै है। (अध्यात्म पंच संग्रह, ज्ञानदर्पण-१४८)

ये अनुभव की रीति है। अकर्तापना कायम रहता है और परिणमता है तब कर्ता-कर्म-क्रिया का भेद पड़ता है, किन्तु उत्तरोत्तर क्षण में भेद विलय होने पर अभेद हो जाता है। કર્તા-કર્મનું અનન્યપણું થઈ જાય છે. कर्ता-कर्म का अनन्यपना हो जाता है।

मुमुक्षुः- तब निर्विकल्प होता है।

उत्तरः- तब निर्विकल्प ध्यान में।

मुमुक्षुः- पहले भेद पड़ता है कर्ता-कर्म-क्रिया का?

उत्तरः- भेद पड़ता है। थोड़ा भेद पड़ता है।

मुमुक्षुः- उत्तरोत्तर वह भेद विलय को प्राप्त होता जाता है।

उत्तरः- वह जमकर ढीम (ठोस) हो जाता है। बर्फ हो जाता है। पानी का बर्फ हो जाता है। पानी प्रवाही था। कर्ता-कर्म-क्रिया है न? (वो पानी है।) पानी प्रवाही था। और फिर जब बर्फ होता है, अभेद। इसप्रकार! पानी ही बर्फ हो जाता है।

मुमुक्षु:- कर्ता-कर्म-क्रिया का भेद निष्क्रिय चिन्मात्र हो जाता है।

उत्तर:- हो जाता है। निष्क्रिय चिन्मात्र। बस!

मुमुक्षु:- अभेद हो जाता है।

उत्तर:- अभेद। **करता करम क्रिया भेद नहीं भासतु है** भेद अब दिखता नहीं है। जहाँ वो भेद दिखना बंद हुआ, वहाँ निर्विकल्प ध्यान में चला गया, खलास! चलो, बहुत सुन्दर।

मुमुक्षु:- **तदनन्तरमविकल्पस्वरूपे प्राप्ते** उसके बाद निर्विकल्प स्वरूप की प्राप्ति होती है।

उत्तर:- अब मोह क्षय होगा, अभी।

मुमुक्षु:- अब तो बीच में दृष्टान्त देते हैं। बाकी बात तो खत्म हो गई है।

मुमुक्षु:- **तदनन्तरमविकल्पस्वरूपे प्राप्ते।**

उत्तर:- नहीं, अभी मोह क्षय का आयेगा।

मुमुक्षु:- अब आयेगा पर बात खत्म हो गई है।

उत्तर:- खत्म-खत्म हो गयी।

मुमुक्षु:- अब इसका फल क्या आया, वह दृष्टान्त से सब बात करते हैं। **यथा** जैसे, दृष्टान्त देते हैं। **पर्यायस्थानीयमुक्ताफलानि** पर्याय के स्थान पर मोती।

उत्तर:- मोती, पर्याय के स्थान पर मोती है।

मुमुक्षु:- **गुणस्थानीयं धवलत्वं** सफेदपना।

उत्तर:- सफेदपना! मोती का जिसप्रकार सफेदपना है, वह गुण (है)। ऐसे यहाँ ज्ञानगुण है।

मुमुक्षु:- **चाभेदनयेन हार एव** और अभेद नय से वो हार ही है।

उत्तर:- गुण और पर्याय का अभेदपना, उसका नाम हार है।

मुमुक्षु:- **तथापूर्वोक्त** ऐसे ही पहले कहे जो **द्रव्यगुणपर्याया** द्रव्य-गुण-पर्याय **अभेदनयेन** अभेद नय से **आत्मैवेति (आत्मा एवं इति)** वो द्रव्य-गुण-पर्याय अभेदनय से आत्मा ही है। इसप्रकार **भावयतो** भाता हुआ **दर्शनमोहान्धकार:प्रलीयते** दर्शनमोह का अन्धकार क्षय हो जाता है।

उत्तर:- क्षय हो जाता है। यहाँ, द्रव्य-गुण-पर्याय से अभेद जब ज्ञेय लिया, ध्येय में अभी मोह प्रलय नहीं हुआ था।

मुमुक्षु:- वे तो मोह क्षपण में समर्थ परिणाम थे।

उत्तर:- समर्थ थे। हाँ!

मुमुक्षु:- परंतु मोह का क्षय तो यहाँ द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप एक अभेदनय से एक वस्तु को भाया तब दर्शन मोह का नाश हो गया।

उत्तर:- अद्‌भुत बात है! द्रव्य का पक्ष आया। पक्ष आया वह तो स्थूल है। फिर जब उपयोग अंदर में जाता है और करणलब्धि के परिणाम शुरू हुए तब उस द्रव्य के आश्रय (से), मोह के नाश का उपाय आ गया। समर्थन हो गया। अब, मोह का नाश होगा ही। ऐसा! अप्रतिहत भाव है उसमें। फिर जब उपयोग अनन्य हो गया, आहाहा! जाननहार जानने में आ गया, अंदर में, दर्शन हुए। तब कहते हैं कि आहाहा! द्रव्य-गुण-पर्याय का अभेदनय से आत्मा **मोह क्षय लयं**, आहाहा! मोह का नाश हो गया।

नाश की ध्वनि है, हों! उपशम की ध्वनि नहीं है।

आहाहा! ऐसा जब समझे कि आत्मा में, आत्मा की पर्याय में राग नहीं होता, आत्मा की पर्याय में चेतना होती है। यदि अरिहंत की पर्याय में राग हो तो मेरी पर्याय में राग हो। आहाहा! अरिहंत की पर्याय ली, बोलो! अरिहंत की पर्याय के साथ हमारी पर्याय मिल जाती है, ऐसा कहते हैं। वो कब मिले? कि यहाँ (मेरे में) राग होता है, ऐसा मत देख अभी। यहाँ (मेरे में) ज्ञान होता है। वहाँ (अरिहंत की पर्याय में) भी ज्ञान होता है और यहाँ (मेरे में) भी ज्ञान होता है। इतना तो नहीं, इससे आगे है। कि उनके (अरिहंत के) ज्ञान में भी आत्मा जानने में आता है और मेरा ज्ञान ऐसा प्रगट होता है कि उसमें मेरा आत्मा ही जानने में आता है, ऐसा लेना। उनके (अरिहंत के) ज्ञान में भी उनका आत्मा जानने में आता है या नहीं? प्रत्यक्ष हो गया या नहीं? इसीप्रकार मेरे वर्तमान चेतना लक्षण में, आहाहा! चेतन जानने में आता है, ऐसा लेना। तब अभेद हो जाता है आत्मा।

मुमुक्षुः- और जानने में आता है, इसलिए तो जानने में आ जाता है उसे। जानने में आता है इसलिए तो जानने में आ जाता है।

उत्तरः- जानने में आ जाता है। जानने में आता है, इसलिए जानने में आ जाता है। परोक्षपने जानने में आता है इसलिए प्रत्यक्ष हो जाता है।

मुमुक्षुः- वह सच्चा है न!

उत्तरः- वह सच्चा है। परोक्ष ज्ञान भी सच्चा है। उपयोग में.., उपयोग में परोक्षपने आत्मा जानने में आता है और शुद्धोपयोग में प्रत्यक्ष जानने में आता है। अब, उपयोग में जब परोक्ष जानने में आता है, सुनना! तब मोह क्षय होने का समर्थपना आ गया और शुद्धोपयोग में जानने में आया तब मोह का नाश हो गया। ये दो भेद पड़ते हैं। इतना भेद पड़ता है। इतना भेद पड़ता है। परोक्षपने जहाँ ज्ञायक हाथ में आया, आहाहा! वहाँ मोह क्षपण में समर्थ हो गया। अभी मोह क्षय होगा।

मुमुक्षुः- प्रत्यक्ष होता है तो मोह क्षय हो जाता है।

उत्तरः- प्रत्यक्ष हो गया, शुद्धोपयोग हुआ, मोह क्षय हो गया, आहाहा! उपयोग में परोक्ष जानने में आता है। शुद्धोपयोग में प्रत्यक्ष जानने में आता है, बस! दोनों जीव के लक्षण हैं और जीव को प्रसिद्ध करते हैं दोनों लक्षण। उपयोग लक्षण भी ...

मुमुक्षुः- जीव को प्रसिद्ध करता है।

उत्तरः- और शुद्धोपयोग भी ..

मुमुक्षुः- जीव को प्रसिद्ध करता है।

उत्तरः- एक परोक्ष और एक प्रत्यक्ष, इतना फर्क है बस! सुबह से (विचार) आया था वही यहाँ आ गया, लो! सुबह से ये विचार आये थे, मैंने भाई को बताया था। वह अभी एकदम सही मौके पर वही बात आयी। वही अभी हमने स्वाध्याय ८० नंबर का किया।

क्योंकि दोनों (का) उपयोग से मिलान हो गया। उनके (अरहंत के) उपयोग में उनका आत्मा जानने में आता है और मेरे उपयोग में मेरा आत्मा जानने में आता है। आहाहा! वो अभिमुख परिणाम हुए। उपयोग में उपयोग है, अन्य कुछ है नहीं। हें? अरिहंत के उपयोग में भी उपयोग और मेरे उपयोग

में भी उपयोग। आहाहा!

मुमुक्षु:- लेकिन उपयोग में तो उपयोग ही होता है न?

उत्तर:- उपयोग ही होता है न? आहाहा! **जिसका जो होता है वह वही होता है न, वही होता है** न? **आत्मा का ज्ञान होने से ज्ञान सो आत्मा ही है** अभेदनय से आत्मा हो गया। अभेदनय का बहुत प्रयोग करते हैं जयसेन आचार्य भगवान! अभेदनय का प्रयोग करते हैं।

मुमुक्षु:- वही अनुभूति है न?

उत्तर:- (हाँ।) शास्त्र में लिख गये। आत्म अभिमुख परिणाम- वो ध्येय की बात की।

मुमुक्षु:- ध्येय की अभिमुखता।

उत्तर:- ध्येय के अभिमुख हो गया। ध्येय पूर्वक, आहाहा! अभेद ज्ञेय हो गया आत्मा। वह ज्ञेय हो गया पूरा। उसमें इतना ही लेना। स्वाश्रित परिणाम उतना ही आत्मा(है)। पराश्रित परिणाम नहीं लेना।

मुमुक्षु:- अरे, यहाँ तो उसकी बात ही नहीं है। उन्होंने भी लिया ही नहीं है।

उत्तर:- उन्होंने लिया ही नहीं है।

मुमुक्षु:- है ही नहीं।

उत्तर:- है ही नहीं। उसकी पर्याय ही नहीं है, (तो) फिर अभेद कहाँ से होगी? जो पर्याय द्रव्य की होती है, वो द्रव्य के साथ अनन्य होती है, अभेद होती है। जो परिणाम पुद्गल के हैं, वे अभेद कहाँ से होंगे? वो तो बात ही नहीं है। यहाँ तो चेतन, चैतन्य और चिद्विवर्तन, इतना लिया है बस! चेतन, चिद्विवर्तन कहो या चेतन कहो। एक ही बात है।

मुमुक्षु:- निर्णय में ही उसे निकाल दिया, तो अनुभूति में तो कहाँ से आवे?

उत्तर:- कहाँ से आवे? निर्णय में (ही) निकाल दिया। क्योंकि वहाँ (अरिहंत में) राग नहीं है, इसलिए यहाँ (मेरे में) राग नहीं है। उनकी (अरिहंत की) पर्याय में राग नहीं है अतः यहाँ की (मेरी) पर्याय में राग नहीं है। तो ही मिलान हो न, नहीं तो मिले कहाँ से?

मुमुक्षु:- वास्तव में वे पुद्गल के परिणाम हैं। जीव के नहीं।

उत्तर:- पुद्गल के परिणाम हैं। जीव के परिणाम नहीं हैं। ऐसा ही है।

अब अमृतचंद्राचार्य की (टीका) है, वो ले लो साथ-साथ। साथ-साथ। उन्होंने भी कर्ता-कर्म और क्रिया का भेद उत्तरोत्तर क्षण में विलीन होता जाता है न, उस करणलब्धि के प्रोसेस की ही बात की है उन्होंने। करणलब्धि की। उन्होंने करणलब्धि शब्द प्रयोग नहीं किया है। लेकिन वो प्रोसेस ही बताई है। उसका तो हिन्दी है न? हाँ, पढ़ो हिन्दी।

आगे, प्रवचनसार शास्त्र गाथा नंबर ८०। उसकी अमृतचंद्राचार्य भगवान की टीका। जयसेन आचार्य भगवान की टीका का हमने स्वाध्याय किया। अब उसी गाथा की अमृतचंद्राचार्य भगवान ने जो टीका की है, उसका हमारा स्वाध्याय चल रहा है। उसका शीर्षक। **आगे, 'मुझसे मोह की सेना कैसे जीती जावे---ऐसे उपाय का विचार करते हैं:--** मोह की सेना को जीतने का उपाय क्या है वो आचार्य भगवान बताते हैं।

अर्थ: जो पुरुष द्रव्य गुण पर्यायों से पूज्य वीतराग देव को जानता है वह पुरुष अपने

स्वरूपको जानता है और निश्चयकर उसीका मोह कर्म नाश को प्राप्त होता है।

नाश की ही ध्वनि है इसमें। **लयं** का अर्थ **नाश को**। नाश को प्राप्त होता है।

भावार्थ:- भावार्थ मतलब उसकी टीका। संस्कृत टीका का हिंदी। **जैसे पिछली आंच का पकाया हुआ सोना निर्मल होता है उसी प्रकार अर्हंत का स्वरूप है।** सोना अशुद्ध हो (तो) उसे शुद्ध करते हैं। कुंडी में डालकर तपाते हैं और परिपूर्ण शुद्ध हो जाता है। ऐसे ही, **उसी प्रकार अर्हंत का स्वरूप है**। सुवर्ण-सोना जैसे शुद्ध है, और शुद्ध सौ टंच का सोना हो गया, उसी प्रकार अर्हंत के द्रव्य-गुण-पर्याय शुद्ध हो गये। अब उनकी पर्याय में भी कहीं अशुद्धता नहीं रही।

उसी प्रकार अर्हंत का स्वरूप है, सोने के दृष्टान्त से। **और निश्चयकर जैसा अर्हंत का स्वरूप है वैसा ही आत्मा का शुद्ध स्वरूप है।** उनके जैसा ही आत्मा का शुद्ध स्वरूप है। शुद्ध अर्थात् द्रव्य-गुण-पर्याय, तीनों शुद्ध स्वरूप हैं। **इसलिए अर्हंत के जानने से आत्मा जाना जाता है।** अर्हंत के द्रव्य-गुण-पर्याय को जानने से अपने आत्मा को जाना जा सकता है। **वह गुण पर्यायों के आधार को द्रव्य कहते हैं।** गुणों और पर्यायों का जो आधार होता है उसे द्रव्य कहने में आता है।

तथा द्रव्य के ज्ञान आदिक विशेषणों को गुण कहते हैं। तथा द्रव्य के ज्ञान आदिक ज्ञान दर्शन आदि **विशेषणों को गुण कहते हैं। और एक समयमात्र काल के प्रमाण से चैतन्य आदि के परिणति भेदों को पर्याय कहते हैं।** ज्ञान को गुण कहते हैं और चैतन्य की पर्याय को, एक समय की पर्याय, उसे पर्याय कहते हैं, **परिणति भेदों को पर्याय**, જ્ઞાન જાણવું-દેખવું ઇત્યાદિ. ज्ञान जानना-देखना इत्यादि। **चैतन्य आदि के परिणति भेदों को पर्याय कहते हैं।** गुण और पर्याय, दोनों की व्याख्या की। ज्ञान को गुण कहा और जानने की क्रिया होती है उसे पर्याय कहा।

प्रथम ही अर्हंत के द्रव्य-गुण-पर्याय अपने मन में अवधारण करे। मन द्वारा जान लेता है, द्रव्य-गुण-पर्याय को पहले। उनके द्रव्य-गुण-पर्याय कैसे हैं, ये अपने मन में लेता है, धारण करता है, अनुभव से पहले, मानसिक ज्ञान में। **प्रथम ही अर्हंत के द्रव्य-गुण-पर्याय अपने मन में अवधारण करे।** करना, पहले अवधारण करना। उनके द्रव्य-गुण-पर्याय कैसे हैं, वो यहाँ मन में लेना पहले। वहाँ देखकर यहाँ मन में निर्णय करना कि चेतन, चैतन्य और चिद्विवर्तन, उनमें इतना ही है, तो वो ले लेना। ऊपर कहा, गुण और पर्याय की बात।

पीछे आप को इन गुण पर्यायों से जाने। मेरे में ज्ञान गुण है और प्रति समय जानने की क्रिया मेरे में होती है। इसप्रकार अपने गुण और पर्याय को स्वयं जाने। क्योंकि गुण-पर्याय का आधार वह द्रव्य है, वो तो आ गया है। वो तो आ गया है। गुण-पर्याय जिसके आधार से होते हैं वो द्रव्य (है), वो तो आ गया है, इसलिए 'गुण और पर्याय को जाने' (इतना लिया।) गुण तो ज्ञान गुण है और पर्याय(में) जानने की क्रिया होती है। बराबर! **जाने और उसके बाद निज स्वरूप को अभेदरूप अनुभवे।** पहले भेदरूप जाने।

प्रथम ही अर्हंत के द्रव्य-गुण-पर्याय अपने मन में अवधारण करे। पीछे उन अरिहंत के द्रव्य-गुण-पर्याय को अवधारण किया। अब **पीछे** अपने में, **आप को इन गुण पर्यायों से जाने।** कि मेरे में भी ज्ञान गुण है और मेरे में भी जानने की क्रिया होती है, उपयोग लक्षण। **जाने और उसके बाद**

वह भेद से, गुण और पर्याय को भेद से जाना, वह व्यवहार हो गया। **उसके बाद निज स्वरूप को अभेदरूप अनुभवे।** जाने और फिर अनुभवे। "जाने" में अनुमान आया। "अनुभव" में प्रत्यक्ष, वो परोक्ष और ये प्रत्यक्ष।

मुमुक्षु:- परोक्ष में भेदरूप जानना होता है।

उत्तर:- परोक्ष में भेदरूप। गुण और पर्याय को जाना। स्वयं अपने ज्ञान में लिया। मेरे में ज्ञान-दर्शन गुण है और मेरे में जानने-देखने की दशा होती है। इसप्रकार गुण और पर्याय को भेद से जाना, पश्चात् अभेद कर दिया। वो प्रोसेस लेंगे बाद में। **अभेदरूप अनुभवे। इस आत्मा के त्रिकाल सबंधी पर्याय एक काल में अनुभवन करे। इस आत्मा के त्रिकाल संबंधी पर्याय एक काल में अनुभवन करे।** इसमें हमें उसका अनुवाद देखना पड़ेगा जरा। देखना पड़ेगा। अभी पढ़ लेता हूँ, फिर देख लेना तुम। थोड़ा अनुवाद में अंतर लगता है।

मुमुक्षु:- नहीं, बराबर नहीं है। नहीं, बराबर नहीं है अनुवाद।

उत्तर:- नहीं है। वो अपना जो गुजराती हुआ है न, वो बराबर है। **इस आत्मा के त्रिकाल संबंधी पर्याय एक काल में अनुभवन करे। जैसे हार में मोती पोए जाते हैं वहाँ भेद नहीं करते हैं। तैसे ही आत्मा में चित् पर्याय को अभेद करे।** पर्याय को अभेद कर दिया द्रव्य में। **जैसे हार में उज्ज्वलगुण का भेद नहीं करते हैं, तैसे ही आत्मा में चेतना गुण को गोपन करे।** चेतना गुण को भी द्रव्य में अन्तर्लीन करे। ऐसा आता है।

जैसे पहिरने वाला पुरुष अभेदरूप हार की शोभा के सुख को वेदता है, वैसे ही केवल ज्ञान से अभेदरूप आत्मिक सुख को वेदे। ऐसी अवस्था के होने पर अगले अगले देखो, **अगले अगले समयों में** उत्तरोत्तर **अगले अगले समयों में कर्ता-कर्म-क्रिया का भेद क्षीण होता है।** ये अधःकरण, अपूर्वकरण के परिणाम आ गये। **क्षीण होता है। तभी क्रिया रहित** निष्क्रिय था न? **क्रिया रहित।**

मुमुक्षु:- अर्थात् भेद रहित।

उत्तर:- भेद रहित। **क्रिया रहित, सभी क्रिया रहित,** आहाहा! कर्ता-कर्म-क्रिया के भेद रहित **चैतन्य स्वभाव को प्राप्त होता है।**

जैसे चोखे खरे रत्न का अकंप निर्मल प्रकाश है तैसे ही चैतन्य प्रकाश जब निर्मल निश्चल होता है तब आश्रय के बिना मोहरूपी अंधकार का अवश्य ही नाश होता है। मोह को पर का आश्रय था। अब अंदर में स्व का आश्रय आया तो मोह तो निराधार हो गया। निराश्रय हो गया। **नाश होता है। आचार्य महाराज कहते हैं जो इस भान्ति स्वरूप की प्राप्ति होती है तो मैंने मोह की सेना के जीतने का उपाय पाया।** अब, जरा तुम संस्कृत पढ़कर देखो तो सही बराबर है कि नहीं?

उसके उपयोग में केवल शुद्धात्मा जानने में आता है, तो यहाँ भी शुद्धोपयोग (में) आत्मा ही जानने में आता है। स्वपर या लोकालोक का कुछ नहीं लिया। तभी अभेद होता है न लेकिन? ज्ञान आत्मा को जानने में आ जाये तब अभेद होता है न? वहाँ जानने जाये तो अभेद कहाँ से हो? वो तो विकल्प का जाल खड़ा होता है, आहाहा! हूबहू प्रोसेस है। हूबहू।

मुमुक्षुः- दो बातें ले ली इसमें। राग की बात नहीं ली एक तो, क्योंकि राग होने का प्रश्न नहीं है आत्मा में। उनमें नहीं है तो यहाँ कहाँ से हो?

उत्तरः- कहाँ से हो? नहीं ही होता।

मुमुक्षुः- एक बात। दूसरी बात। उनके ज्ञान में उनका आत्मा ही जानने में आता है, भगवान को। उसीप्रकार मेरे उपयोग में, मेरे ज्ञान में भी यह ज्ञायक ही जानने में आता है। दो बातें आई।

उत्तरः- तब अभेद होता है। पर जानने में आये तो यहाँ अभेद नहीं होता, ऐसा मेरा कहना है। आहाहा! कर्ता भी नहीं है और ज्ञाता भी नहीं है पर का। वास्तव में दिगंबर संतों ने बहुत उपकार किया है शास्त्र से।

मुमुक्षुः- बहुत उपकार। आत्मा को ऐसे बाहर लाकर दिखाया।

उत्तरः- दिखाया, हथेली में। तू आँख खोले इतनी देर (है), बस तुझे भी दिखेगा। तू रूचि की आँख खोलकर रख।

मुमुक्षुः- अनुभव की विधि प्रत्यक्ष बताते हैं। आहाहा!

उत्तरः- हूबहू! हूबहू!

मुमुक्षुः- आत्मा में ज्ञान होता है और ज्ञान में आत्मा जानने में आता है।

उत्तरः- जानने में आता है।

मुमुक्षुः- बस, इतना ही है।

उत्तरः- आत्मा का स्वभाव ज्ञान और ज्ञान का स्वभाव आत्मा को जानना वह।

मुमुक्षुः- भेद निकल जाए तो मोह क्षय हो जाये।

उत्तरः- (हाँ)। जैसा केवलज्ञान में स्वरूप भासित होता है, ऐसा (ही) मति-श्रुत में भासित होता है। उससे अलग भासित नहीं होता।

मुमुक्षुः- क्योंकि वही केवलज्ञान में कन्वर्ट होगा न?

उत्तरः- वही होनेवाला है न? वह मति-श्रुतवाला ही केवलज्ञानी होनेवाला है फिर। जैसा अरिहंत ने केवलज्ञान में जाना, ऐसा ही यह जाने तब अरिहंत होगा न? आहाहा!

मोह लयं। और अमृतचंद्राचार्य ने मोह की सेना को जीतने का उपाय हाथ में लिया, मोह को जीतने का नहीं।

मुमुक्षुः- वह (दर्शनमोह) तो जीता जा चुका है।

उत्तरः- मोह की सेना अर्थात् मोह क्षय होता है, उसके पश्चात् सेना रहती है चारित्रमोह की, उसे जीतने का उपाय हाथ में आ गया है।

मुमुक्षुः- उसे जीतने का उपाय भी यह ही है। एक ही उपाय है।

उत्तरः- (हाँ।) जो मिथ्यात्व को जीतने का उपाय है, वही अव्रत-कषाय को जीतने का उपाय है। इसलिए सेना ली है उसकी। सेनापति के साथ सेना होती है। तो सेनापति को तो जीता है मैंने। तो सेनापति को जिस रीति से जीता, तो सेना को जीतना तो सामान्य है अब मेरे लिए।

मुमुक्षुः- उन्होंने कहा, 'अगर ऐसे ही जीता जाता है तो वो उपाय तो मैंने प्राप्त कर लिया है।'

उत्तरः- कर लिया है प्राप्त, बस! क्या शब्द प्रयोग किया है! सेना को जीतने का उपाय। मोह की सेना को। मोह तो जीत लिया है। हें?

मुमुक्षुः- मोह तो जीत लिया है। बराबर।

उत्तरः- अर्थात् उसमें दोनों प्रकार ले लिये, दोनों प्रकार अर्थात् मूल ले लिये, आहाहा! मन द्वारा पहले जान लेता है आत्मा को। वह जो शब्द है न? **मन द्वारा जान लेता है,** वह यथार्थ निर्णय की भूमिका है।

मुमुक्षुः- अपूर्व निर्णय।

उत्तरः- अपूर्व निर्णय और अफर (अटल) निर्णय है। उसके पीछे अनुभूति बँधी हुई है। वो ऐसा निर्णय है। मन द्वारा जान लेता है। बोलो! इन्होंने मन द्वारा जान लेता है, ऐसा कहा और उन्होंने (जयसेनाचार्य की टीका में) सविकल्प स्वसंवेदन लिया है।

मुमुक्षुः- एक ही बात है।

उत्तरः-एक ही बात है। सविकल्प स्वसंवेदन कहो या मन द्वारा या ज्ञान में परोक्ष आत्मा आ गया (ऐसा कहो), एक ही बात है।

मुमुक्षुः- अनुमान ज्ञान कहो।

उत्तरः- अनुमान ज्ञान।

मुमुक्षुः- शब्द अलग-अलग हैं भाई! प्रक्रिया तो एक ही है न?

उत्तरः- एक ही होती है न? आहाहा! ऐसे स्वरूप की चर्चा भी कोई करता नहीं है। चर्चा करने जैसी तो यह है, जिसमें मोह का क्षय हो जाये। मोह क्षय की चर्चा है। वो संस्कृत जरा पढ़ना तुम, मन में,अपने मन में।

मुमुक्षुः- **यो हि नामार्हन्तं द्रव्यत्वगुणत्वपर्ययत्वैः परिच्छिनत्ति स खल्वात्मानं परिच्छिनत्ति, उभयोरपि निश्चयेनाविशेषात्।** अपने को और अरिहंत को, दोनों को निश्चय से जाने। द्रव्य-गुण-पर्याय।

उत्तरः- बराबर। निश्चय से, उनके (अरिहंत के) द्रव्य-गुण-पर्याय हैं, ऐसा मेरा आत्मा है इसप्रकार निश्चय से मिल जाता है। बराबर। जाना।

मुमुक्षुः- **अर्हतोऽपि पाककाष्ठागतकार्तस्वरस्येव परिस्पष्टमात्मरूपं** , अरिहंत सौ टंच के सोने की भाँति परिपूर्ण परिस्पष्ट एकदम शुद्ध स्वरूप है (अरिहंत की) आत्मा का। **ततस्तत्परिच्छेदे सर्वात्मपरिच्छेदः।** ऐसा ही आत्मा है। वहाँ **तत्र** वहाँ, **अन्वयो द्रव्यं** अन्वयरूप द्रव्य, **अन्वयविशेषणं गुणः** , अन्वय का विशेषण, द्रव्य का विशेषण गुण है। **अन्वयव्यतिरेकाः पर्यायाः** अन्वय का व्यतिरेक पर्याय है।

उत्तरः- अन्वय का भेद वह पर्याय। द्रव्य का भेद वह पर्याय। उन्होंने ऐसा लिया। समझ गये? गुण का भेद पर्याय नहीं, द्रव्य का (भेद) लिया।

मुमुक्षुः- अर्थात् उसमें व्यंजन पर्याय लेनी है।

उत्तरः- व्यंजन पर्याय लेनी है। मैं ये बोलने ही जा रहा था अभी। ये बराबर है। खरे हो तुम भी।

मुमुक्षुः- सब आपने ही सिखाया है न? **तत्र भगवत्यर्हति सर्वतो विशुद्धे त्रिभूमिकमपि स्वमनसा समयमुत्पश्यति।** अर्थात् उन अरिहंत भगवान को सर्व प्रकार से शुद्ध अपने मन द्वारा देख लेता है। मन से देख लेता है।

उत्तरः- क्योंकि मन का विषय रूपी और अरूपी दोनों है न, इसीलिए। मन में आ जाता है, अरूपी आत्मा। तत्वार्थ सूत्र का पाठ है, मन का विषय रूपी और अरूपी दोनों हैं। कहीं भी दोष नहीं आता। ये सब अभ्यास किया हुआ है न? ऐसे समय पर हाजिर होता है। बराबर है। मन द्वारा जानने में आ जाता है आत्मा।

मुमुक्षुः- अरिहंत का आत्मा।

उत्तरः- अरिहंत का आत्मा। ठीक है। चलो।

मुमुक्षुः- **यश्चेतनोऽयमित्यन्वयस्तद्द्रव्यं** , जो यह चेतन अन्वयरूप है वह द्रव्य है।

उत्तरः- चेतन-चेतन-चेतन। चेतन को द्रव्य कहते हैं।

मुमुक्षुः- अन्वय, अन्वय रूप,

उत्तरः- अन्वय रूप।

मुमुक्षुः- चेतन वह द्रव्य है।

उत्तरः- अन्वय अर्थात् है-है-है और है ही, बस!

मुमुक्षुः- **यच्चान्वयाश्रितं चैतन्यमिति विशेषणं स गुणः**

उत्तरः- अन्वय के आश्रय से रहा हुआ चैतन्य वह गुण है। इसप्रकार चेतन और चैतन्य ऐसे द्रव्य और गुण में नाम का अंतर किया है।

मुमुक्षुः- नाम का अंतर किया है।

उत्तरः- बराबर है।

मुमुक्षुः- चेतन तो अभेद है। और इस चैतन्य में दर्शन-ज्ञान दो गुण हैं।

उत्तरः- दो ही गुण हैं मुख्यपने। उसमें तो अनंत गुण आ जाते हैं, द्रव्य में। बराबर है।

मुमुक्षुः- **ये चैकसमयमात्रावधृतकालपरिमाणतया परस्परपरावृत्ता अन्वयव्यतिरेकास्ते पर्यायाश्चिद्विवर्तनग्रंथय इति यावत्**

उत्तरः- चिद्विवर्तन शब्द प्रयोग किया है न? चिद् अर्थात् चैतन्य का विवर्तन (अर्थात्) पलटना होता है, उपयोग का परिणमन लिया। विवर्तन (अर्थात्) परिणमन लिया। उपयोग, वह उपयोग लक्षण है। बराबर है। चिद्विवर्तन उपयोग का पलटना होता है न? एक समय का ही उपयोग है। दूसरे समय दूसरा उपयोग। इसप्रकार! बराबर है। कैसा संकलन किया है उन्होंने! आहाहा!

मुमुक्षुः- यहाँ तो अन्वय के व्यतिरेक।

उत्तरः- हाँ, अन्वय के व्यतिरेक।

मुमुक्षुः- अन्वय के व्यतिरेक जो पर्याय, चिद्विवर्तन उसको पर्याय ली है।

उत्तरः- पर्याय ली, बराबर। ठीक है।

मुमुक्षुः- अर्थात् द्रव्य की भी वो पर्याय, उपयोग लिया है यहाँ।

उत्तरः- हाँ, उपयोग लिया है।

मुमुक्षुः- चिद्विवर्तन।

उत्तरः- चिद्विवर्तन! उपयोग ही लिया है। उसमें उन्होंने व्यंजन पर्याय नहीं ली है। मुमुक्षुः- नहीं, उपयोग ही लिया है।

उत्तरः- बराबर। यह व्यंजन पर्याय तो जयसेनाचार्य ने ली है। इन्होंने (अमृतचंद्राचार्य ने) नहीं ली है।

मुमुक्षुः- इसप्रकार जाना न? चेतन, चैतन्य और ...

उत्तरः- चिद्विवर्तन जाना।

मुमुक्षुः- चिद्विवर्तन। तीनों को जाना। अब क्या कहते हैं? कि **अथ** इसके बाद, **अथैवमस्य त्रिकालमप्येककालमाकलयतो** त्रिकाली को जान लेता है।

उत्तरः- जान लेता है। जान लेता है।

मुमुक्षुः- त्रिकाली को।

उत्तरः- त्रिकाली को।

मुमुक्षुः- त्रिकाली अर्थात् त्रिकाली द्रव्य लेना चाहिये न?

उत्तरः- त्रिकाली द्रव्य। द्रव्य, गुण, पर्याय नहीं। त्रिकाली को। मुमुक्षुः- इसमें यह अर्थ बराबर नहीं है। आत्मा की त्रिकाल संबंधी पर्याय एक काल में अनुभव कर लेता है। उत्तरः- वह अर्थ नहीं किया है। अपने में (गुजराती अनुवाद में) त्रिकाली को जान लेता है (ऐसा अर्थ किया है)।

मुमुक्षुः- **चिद्विवर्तांश्चेतन एव संक्षिप्य विशेषणविशेष्यत्ववासनान्तर्धानाद्धवलिमानमिव प्रालम्बे चेतन एव चैतन्यमन्तर्हितं विधाय केवलं प्रालम्बमिव केवलमात्मानं परिच्छिन्दतस्तदुत्तरोत्तरक्षणक्षीयमाणकर्तृकर्मक्रियाविभागतया निष्क्रियं** कितना बड़ा वाक्य लिखा है।

उत्तरः- बहुत बड़ा है, हाँ।

मुमुक्षुः- **निष्क्रियं चिनमात्रं भावमधिगतस्य जातस्य मणेरिवाकम्पप्रवृत्तनिर्मलालोकस्यावश्यमेव निराश्रयतया मोहतमः प्रलीयते।** कहते हैं कि त्रिकाली को ले लेता है फिर **मुक्ताफलानीव प्रलम्बे।** मुक्ता फल की जगह पर्याय को लिया। उत्तरः- पर्याय कहा। बराबर। मोती। मोती को इसमें अंतर्धान करता है, हार में।

मुमुक्षुः- संक्षेपण करता है।

उत्तरः- संक्षेपण करता है। मिला देता है।

मुमुक्षुः- मोती की तरह जो चिद्विवर्तन है उसे चेतन में संक्षेपता है।

उत्तरः- संक्षेपता है। बराबर। इसीप्रकार द्रव्य के सन्मुख होकर अभेद कर देता है। द्रव्य कर देता है। पर्याय को द्रव्यरूप कर देता है।

मुमुक्षुः- अर्थात् द्रव्य का अनुभव कर लेता है पर्याय में।

उत्तरः- सही है। पर्याय में एकाग्र हो जाता है तो पर्याय का भेद नहीं दिखता। पर्याय स्वयं

द्रव्यरूप हो जाती है, ऐसा!

मुमुक्षुः- पर्याय का भेद छोड़कर द्रव्य में एकाग्र होने पर, पर्याय द्रव्यरूप हो जाती है।

उत्तरः- बस-बस! जो 'अनुभूति वह आत्मा' ऐसा कहा है, वह ये। बराबर।

मुमुक्षुः- **चिद्विवर्तांश्चेतन एव संक्षिप्य** चिद्-विवर्तन को चेतन में संक्षेप करके और **विशेषणविशेष्यत्ववासना** गुण और गुणी की जो वासना,

उत्तरः- उसका अंतर्धान करता है। उसमें लीन करता है। गुणभेद को निकाल देता है। पर्याय भेद निकालता है। फिर गुणभेद का भेद निकालकर, अभेद कर देता है। पर्याय को द्रव्य में अभेद करता है। पर्याय के भेद को और गुणभेद को छोड़कर द्रव्य को देखता है तो गुण और द्रव्य एक हो जाते हैं, ऐसा! बराबर।

मुमुक्षुः- अर्थात् पर्याय का भेद दिखता नहीं है और गुणभेद भी दिखता नहीं है।

उत्तरः- गुणभेद दिखता नहीं, बस!

मुमुक्षुः- अकेला स्वभाव दिखता है।

उत्तरः- अकेला अभेदनय से आत्मा है। बराबर है। यह बराबर है। वह शब्द आया। त्रैकालिक को भी एक समय में जान लेता है। उसका एक विचार आता है। कहूँ विचार? मुमुक्षुः- हाँ, फरमाइए। उत्तरः- वैसे तो त्रिकाली को जान लेता है, वह तो त्रिकाली द्रव्य ही है और उसके सन्मुख होता है तभी मोह क्षपण का समर्थपना होता है। अर्थात् इस बात को रखकर, उपरांत विचार तो आवें न बहुत। तो अभी जैसा आत्मा मेरे अनुभव में आया न, द्रव्य-गुण-पर्यायरूप, भूतकाल में (भी) मेरा ज्ञेय ऐसा था। और भविष्यकाल में भी ऐसा ही ज्ञेय रहनेवाला है। मात्र विचार था। ज्ञेय की प्रधानता है, वह ध्यान रखना। अभी जो ज्ञेय जानने में आया मुझे, आलोचना हुई न? द्रव्य, गुण और पर्याय, क्योंकि पर्याय में तो चिद्विवर्तन ही लिया है, उपयोग लिया है। उन्होंने मतिज्ञान या अशुद्ध उपयोग या मिथ्याज्ञान ऐसा नहीं लिया है। भूतकाल में भी मेरा आत्मा, आज मैंने देखा न, भले मेरे ज्ञान में नहीं आया था, वह अलग बात है।

मुमुक्षुः- वह अलग बात है। वो डिपार्टमेंट पूरा अलग है।

उत्तरः- अलग है, वह डिपार्टमेंट अलग है। वस्तु कैसी थी पूर्व में? पूर्व में मैं रागरूप हुआ था? कि नहीं! मैं ज्ञान से अनन्य ही था पूर्व में। वर्तमान में अनन्य का अनुभव हुआ। प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और आलोचना के विचार आये मुझे। भूतकाल में भी मैं ज्ञान से अनन्य था। जैसे वर्तमान में ज्ञान से अनन्य अनुभव हुआ मुझे प्रत्यक्ष (वैसा ही भूतकाल में अनन्य था)।

मुमुक्षुः- जैसा अभी हूँ ऐसा ही तीनों काल हूँ।

उत्तरः- ऐसा भूतकाल में, त्रिकाल हूँ। ये ज्ञेय की प्रधानता से बात है। ऐसा विचार, पहले दो चार बार आया सही। दो चार बार हों! एक बार नहीं। तीनों काल मैं ज्ञान से अनन्य हूँ, तीनों काल। एक समय (भी) राग से अनन्य नहीं हुआ। तो-तो जड़ हो जाये। उसे भान नहीं था वो अलग बात है। वस्तु की स्थिति कैसी थी?

मुमुक्षुः- वस्तु की बात चलती है।

उत्तरः- वस्तु की बात चलती है।

मुमुक्षुः- कि मैं कैसा था? वह तो भान तो नया होता है यहाँ।

उत्तरः- भान नया होता है।

मुमुक्षुः- ध्येय का भान भी नया होता है और ज्ञेय का भान भी नया होता है।

उत्तरः- ज्ञेय का भान भी नया होता है। दोनों भान नये होते हैं। कुछ जानता नहीं था न। कुछ जानता नहीं था।

मुमुक्षुः- ध्येय का भान हुआ उसका नाम सम्यग्दर्शन और ज्ञेय का भान हुआ उसका नाम सम्यग्ज्ञान।

उत्तरः- बराबर, बराबर।

मुमुक्षुः- सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान नए होते हैं, किंतु मैं तो अनादि से जैसा था वैसा ही हूँ।

उत्तरः- ये तो एक विचार (है)।

मुमुक्षुः- बराबर है एकदम।

उत्तरः- विचार करना, बस! दूसरा क्या? क्योंकि भूतकाल में भी ज्ञेय, रागवाला ज्ञेय नहीं लेना चाहिये। क्योंकि अभी रागवाला (ज्ञेय) नहीं लेता है।

मुमुक्षुः- फिर भूतकाल में कैसे ले सकते हैं!

उत्तरः- अभी राग रहित है। पर्याय में राग नहीं है। वहाँ (अरिहंत में) भी नहीं है, यहाँ भी नहीं है। निकाल दिया न राग को तो? तो एक समय पूर्व भी राग नहीं था। भूतकाल में भी नहीं था। पूर्व भव में भी नहीं था राग।

मुमुक्षुः- वास्तव में नहीं था राग।

उत्तरः- वास्तव में नहीं था, क्योंकि वे तो पुद्गल के ही परिणाम (हैं)। भले साथ-साथ थे। किंतु (मैं)उपयोग से अनन्य था। आज उपयोग से अनन्य भासित हुआ, तो उपयोग से अनन्य था तो भासित हुआ न? तो कल भी अनन्य था, परसो भी अनन्य था। इसप्रकार तुम जरा भूतकाल में लंबा दो।

मुमुक्षुः- अनादि से अनन्य था, उपयोग से अनन्य था।

उत्तरः- उपयोग से अनन्य था। ऐसा ही ज्ञेय है। गुण से अभेद ध्येय है। पर्याय से अभेद ज्ञेय है। ज्ञेय भी पूरा। ध्येय भी पूरा है। **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** (तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय ५, सूत्र ३०) अनादि अनंत है। देखो अब! **गुणपर्ययवत् द्रवयम्** अनादि अनंत है। यह जैनदर्शन है न, बहुत विशाल है। बहुत विशाल है। जैनदर्शन। बहुत विशाल है। **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** अनादि अनंत और **गुणपर्ययवत् द्रव्यम्** भी अनादि अनंत। तो अनादि अनंत **गुणपर्ययवत् द्रव्यम्** में क्या लोगे तुम? उपयोग ही लेना चाहिए। राग नहीं लेना चाहिए।

मुमुक्षुः- नहीं लेना चाहिए। अभी भी नहीं लेते।

उत्तरः- अभी भी नहीं लेते, तो फिर?

मुमुक्षुः- बहुत सुंदर बात है।

उत्तरः- ज्ञेय का ज्ञान होता है यहाँ। ज्ञेय का ज्ञान। ध्येय तो बराबर है। उसमें तो कोई दो मत हैं

नहीं। दो मत पड़ते हों तो ज्ञेय में पड़ते हैं जगत को। ज्ञेय में भी एक ही मत है। दो मत हैं ही नहीं। उपयोग से अनन्य है। वह तो शास्त्र कहता है न।

मुमुक्षुः- बिल्कुल सही बात है।

उत्तरः- तो आज से उपयोग से अनन्य तुझे भासित हुआ और राग से अन्य भासित हुआ, तो तू ऐसा ही था। इसीलिए भासित हुआ। जो था वो भासित हुआ न? आहाहा!

मुमुक्षुः- पहले, जैसा था ऐसा भासित नहीं होता था, वह तो अज्ञान था।

उत्तरः- वह तो अज्ञान था। मुमुक्षुः- अब जैसा था वैसा भासित हुआ।

उत्तरः- वैसा भासित हुआ। तो **गुणपर्ययवत् द्रव्यम्, उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** , अनादिअनंत है। वह ज्ञेय अनादिअनंत है।

मुमुक्षुः- एकदम सच्ची बात है। बराबर है।

उत्तरः- यह तो शास्त्र का आधार तुम्हें देता हूँ। **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** , और **गुणपर्ययवत् द्रव्यम्।**

मुमुक्षुः- उसमें आता है न? सदा उपयोग लक्षण से।

उत्तरः- सदा उपयोग लक्षण, बस वह। उस उपयोग से आत्मा अनन्य है। और उपयोग से अनन्यरूप परिणमता है। किंतु उसकी नजर वहाँ नहीं है न, इसलिए मैं रागरूप से परिणमता हूँ(ऐसा मानता है)। वह तो भ्रमणा है। वह तो अज्ञान है। वह कोई वास्तविक थोड़ी न है?

मुमुक्षुः- वह कोई वस्तु थोड़ी है?

उत्तरः- वस्तु थोड़ी न ऐसी हो गई है? वह मानता है ऐसी?

मुमुक्षुः- वह तो कल्पना है।

उत्तरः- कल्पना-कल्पना। उसकी कल्पना है।

आहाहा! स्वाध्याय तो स्वाध्याय है। हमें वाद-विवाद में पड़ना नहीं है कहीं। क्योंकि प्रवचनसार ज्ञान प्रधान है। ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान है। ज्ञान प्रधान अर्थात् सम्यग्ज्ञान प्रधान। तब? ज्ञान प्रधान में द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों आते हैं। ये सब निकलता है, (क्योंकि) ध्येय पूर्वक ज्ञेय का स्वीकार किया तुमने, इसलिए कहता हूँ तुम्हें। जो स्वीकार न किया होता ध्येय पूर्वक ज्ञेय का, तो यह बात अंतर की नहीं की जाती। ऐसा ज्ञेय होता है, होता है तो पूर्व में (भी) ऐसा था।

मुमुक्षुः- ऐसा था। ऐसा भान हुआ।

उत्तरः- ऐसा भान हुआ। नया क्या किया उसने? था ऐसा जान लिया, बस!

मुमुक्षुः- ध्येय भी अनादि का। ज्ञेय भी अनादि का। उसका भान नया होता है।

उत्तरः- भान नहीं था। ध्येय का भी भान नहीं था और ज्ञेय का भी भान नहीं था।

मुमुक्षुः- भाई, यह तो बहुत सुन्दर बात है। टंकोत्कीर्ण बात है एकदम। तो ज्ञान में, भाई! कुछ छिपा नहीं रह सकता है। ज्ञान में जैसा स्वरूप है ऐसा आ ही जाता है।

उत्तरः- आ ही जाता है। आ ही जाता है। जब जब मैं यह पढ़ता हूँ न तब तब वही भाव आता है। किन्तु दबा के रखता हूँ। मेरा जो ओब्ज़रवेशन (observation) अथवा मेरा स्वाध्याय है वह ज्ञानी

के साथ-साथ चलने का है। अर्थात् ज्ञानी का हृदय, यहाँ ज्ञानी क्या कहना चाहते हैं, वहाँ मेरा लक्ष्य जाता है। अपनी जो बातें होती हैं दृष्टि के विषय की, उन्हें आगे नहीं करना चाहिये ज्ञान प्रधान कथन में, (उन्हें आगे करे) तो यह समझ में नहीं आता।

मुमुक्षुः- बहुत मांगलिक प्रवचन है आपका।

उत्तरः- संध्या! मध्यस्थता से विचार करनेवाले जीव कम हैं। आत्मार्थी बने तो मध्यस्थ हो। बाकी पक्षपात में, या इसकी तरफ खिंच जाता है, या उसकी तरफ खिंच जाता है। कल पत्र पढ़ा तो वह ही हुआ, खिंचाव खिंचाव, खिंच गये हैं।

मुमुक्षुः- मध्यस्थ नहीं हैं।

उत्तरः- (न)।

मुमुक्षुः- यह देखो! कैसी मध्यस्थता! देखो न अब? इसमें भी प्रत्यक्ष दिखता ही है कि आत्मा उपयोग में ही रहता है। अनादि से आत्मा उपयोग में ही रह रहा है। उपयोग से बाहर गया ही नहीं आत्मा।

उत्तरः- जाये कहाँ से?

मुमुक्षुः- ऐसे ज्ञेय में ही ऐसा ध्येय स्वरूप आत्मा रहा हुआ है।

उत्तरः- बस!

मुमुक्षुः- उपयोग में उपयोग है।

उत्तरः- परिणामी में अपरिणामी रहा हुआ है। वह परिणामी है। प्रति समय उपयोग से अनन्यरूप से परिणमता है।

मुमुक्षुः- परिणमता है। वस्तु ऐसी है न? वस्तु ऐसी है।

उत्तरः- वस्तु ऐसी है। वस्तु ऐसी है। सूर्य प्रकाश में ही रहा हुआ है। दीपक अपने प्रकाश में ही रहा हुआ है। प्रकाश के बाहर जाता नहीं सूर्य।

मुमुक्षुः- कहाँ जाये? किसप्रकार जाये?

उत्तरः- जा सकता ही नहीं, खलास! वस्तु स्थिति है। वस्तु अपनी मर्यादा नहीं छोड़ती। तो वस्तु का नाश हो जाये। छोड़ती ही नहीं।

मुमुक्षुः- नाश तो हुआ नहीं है।

उत्तरः- हुआ नहीं है। मतलब मर्यादा में ही रहा है। नहीं तो होता नहीं अभी आत्मा का अस्तित्व। मुमुक्षुः- उपयोग में उपयोग रहा हुआ ही है।

उत्तरः- बस! उपयोग में उपयोग है। टंकोत्कीर्ण बात है।

मुमुक्षुः- टंकोत्कीर्ण बात है, और जयसेनाचार्य की टीका में अभेद परिणामी लिया है।

उत्तरः- हाँ, अभेद परिणामी लिया है।

मुमुक्षुः- परिणामी में अपरिणामी रहा हुआ है।

उत्तरः- वह बराबर है। अभेद लिया है।

मुमुक्षुः- परिणामी में अपरिणामी है, वह तो हम भेद करके बात करते हैं।

उत्तरः- जयसेनाचार्य भगवान की जो टीका है न वो ज्ञानप्रधान है। और ये दृष्टिप्रधान है। इसलिए दोनों में थोड़ा अंतर है।

मुमुक्षुः- किंतु दोनों अविरोध हैं।

उत्तरः- दोनों अविरोध हैं। दोनों सम्यग्ज्ञानी महा संत हैं, आहाहा! अति आसन्नभव्य धर्मात्मा हैं, उसमें क्या? वह स्वरूप है, स्वरूप है। ऐसा ज्ञेय है।

मुमुक्षुः- क्योंकि आपने एकबार कहा था मुंबई में। यह थोड़ी सामान्य बात हो गई, कि पर्याय बिना द्रव्य नहीं होता है और द्रव्य बिना पर्याय नहीं होती है। तो आत्मा कौनसी पर्याय में रहा है अनादि से? विचार करो।

उत्तरः- बस! विचार करो।

मुमुक्षुः- उपयोग में रहा है।

उत्तरः- बस! उपयोग में ही रहे न? अन्य कहाँ रहे?

मुमुक्षुः- जैसा सामान्य होता है ऐसा ही उसका विशेष होता है।

उत्तरः- ऐसा विशेष। वह विशेष में रहा हुआ है। और ऐसा सामान्य विशेषरूप से परिणमता है। ऐसा है, उससे विशेष...

मुमुक्षुः- उससे ही सामान्य की पहचान होती है न!

उत्तरः- पहचान होती है, बस! वह उपयोग लक्षण है, वह बराबर है।

मुमुक्षुः- एकदम बराबर है। उसमें कोई अंतर नहीं है। उत्तरः- तत्त्वार्थसूत्रकार ने जो कहा वो सत्य है। मुमुक्षुः- कैसी बात की है उन्होंने। **उपयोगो लक्षणम्** (तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय २, सूत्र ८)। १७-१८ गाथा में भी उपयोग में आत्मा जानने में आता है।

उत्तरः- हाँ!

मुमुक्षुः- कितनी स्पष्ट चोखी बात की है।

उत्तरः- स्वयं स्वयं को जाननेरूप परिणम रहा है। परिणामी है आत्मा, बोलो!

मुमुक्षुः- उसका परिणाम लिया है।

उत्तरः- लिया है, तब! वह ज्ञेय है। वह ज्ञेय अनादि अनंत है। वह १७-१८ गाथा का जो भाव है वह अनादि अनंत है।

मुमुक्षुः- वस्तु की स्थिति ऐसी है।

उत्तरः- वस्तु की स्थिति ऐसी है। उपयोग में आत्मा का अनुभव होता है। आहाहा! वह ज्ञेय है। वह ज्ञेय अनादिअनंत है। स्वीकार न करे वह तो उसकी भूल है। वह अलग बात है। वह तो अलग व्यक्तिगत बात हो गई। व्यक्तिगत। समस्तीगत क्या है? वस्तु का स्वरूप। बस!

मुमुक्षुः- इसमें कितने सारे न्याय हैं। **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** वह अनादि अनंत है न?

उत्तरः- **गुणपर्ययवत् द्रव्यम्** भी ..

मुमुक्षुः- अनादि अनंत है।